5

भाई! अब मैं, ऐसा जाना..

भाई! अब मैं, ऐसा जाना.....
पुद्गल द्रव्य अचेत भिन्न हैं, मेरा चेतन बाना।।
भाई! अब मैं, ऐसा जाना...

कल्प अनन्त, सहत दुख बीते, दुख को सुखकर माना।
सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मन तैं आना।।1।।
भाई! अब मैं, ऐसा जाना....

जहाँ भोर थी तहाँ भई निशि, निशि की ठौर विहाना।
भूल मिटी, जिन पद पहिचान्या, परमानन्द निधाना।।2।।
भाई! अब मैं ऐसा जाना....

गूँगे का गुड़ खाय, कहे किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना।
'द्यानत' जिन देख्या ते जानै, आत्म ज्ञान विज्ञाना।।3।।
भाई! अब मैं ऐसा जाना....

अरे भाई! मैंने अब यह जान लिया है कि पुद्गल चेतना रहित है, अचेतन है और मेरा आत्मा चेतन है। आत्मा व पुद्गल दोनों भिन्न-भिन्न हैं।।टेक।।

अनंत काल दुःख सहन करते हुये बीत गये और मैंने दुःख को ही सुख मान लिया। सुख और दुख दोनों ही कर्म की अवस्थायें हैं। मैं तो कर्मों से अन्य हूँ, अलग हूँ, भिन्न हूँ। मैंने अब यह जान लिया है।।१।।

जहाँ सुबह थी वहाँ रात हो गई। रात के बाद फिर सुबह हो गई, इसीप्रकार सुख-दुख, पुण्य-पाप का भी क्रम चलता रहता है, पर ये भी अलग-अलग नहीं हैं अपितु कर्म ही हैं। जब यह भूल मिट गई और श्री जिनेन्द्र भगवान के चरण कमलों का आश्रय लेकर निज को पहचाना तब परमानन्द की प्राप्ति हुई।।२।।

कविवर द्यानतराय जी कहते हैं कि जिस प्रकार गूँगा व्यक्ति गुड़ खाकर उसके स्वाद को तो जानता है परन्तु उसे व्यक्त करने में अर्थात् कहने में असमर्थ होता है। उसी भाँति मैंने अपना चेतन स्वरूप पहचाना, अनुभव किया पर उस अनुभूति को वचनों के द्वारा नहीं कहा जा सकता।

लोक में प्रसिद्ध कहावत है कि हंस और मेंढक दोनों जल में रहते हैं परन्तु दोनों में बहुत अंतर है, भेद है; इनका भेद जिसने देखा है, अनुभव किया है वह ही दोनों के वास्तविक स्वरूप को जानता है। उसी प्रकार जिसने आत्मा और जड़ के भेद को जान लिया है एवं अनुभव कर लिया है वह ही निश्चय से आत्मा को जानता है।।३।।